पेरिमोन भगबथी

बनाम

भार्गवी अम्मा (मृतक) के विधिक वारिसान और अन्य के द्वारा

(सिविल अपील संख्या 4440/2008)

11 जुलाई 2008

[आरवी रवीन्द्रन और लोकेश्वर सिंह पैन्टा, जेजे]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908:

आदेश 22, नियम 4, 10ए और 11 - दूसरी अपील के उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदन - दाखिल करने में देरी - देरी के संबंध में 'पर्याप्त कारण' - एकमात्र वादी (दूसरी अपील में प्रतिवादी संख्या 2) की 17.04.2002 को मृत्यु हो गई। उपशमन को रद्द करने और विधिक वारिसान के प्रतिस्थापन के लिए आवेदन 9.10.2003 को दायर किया, जो उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया, अभिनिर्धारित किया गयाः परिश्रम की कमी या लापरवाही के लिए अपीलकर्ता को केवल तभी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जब वह मृत्यु के बारे में जानता है और विधिक वारिसान को रिकॉर्ड पर लाने के लिए कदम उठाने में विफल रहता है। मौजूदा मामले में, दूसरी अपील 1993 में स्वीकार की गई थी

लेकिन सुनवाई की तारीखें समय-समय पर तय नहीं की गईं। न तो उच्च न्यायालय में मृत प्रतिवादी के वकील ने और न ही मृतक के कानूनी विधिक प्रतिनिधियों ने उच्च न्यायालय को मृत्यु की सूचना दी। अपीलकर्ता को मृत्यु होने की सूचना नहीं दी गई। अपीलकर्ता के इस दावे का खंडन करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि वह प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था। विलंब माफ किया गया - उपशमन रद्द कर दिया गया। मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने की अनुमति दी गई। उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदनों में जिन सिद्धांतों को लागू किया जाता है, उनका सारांश निम्न हैः-

(i) शब्द ''सीमा अवधि के भीतर आवेदन न करने के पर्याप्त कारण'' को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और मामले के प्रकार के आधार पर युक्तियुक्त, व्यावहारिक और उदार तरीके से समझा और लागू किया जाना चाहिए। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 में 'पर्याप्त कारण' शब्द का उदार अर्थान्वयन होना चाहिए ताकि सारवान न्याय को आगे बढ़ाया जा सके, जब अपीलकर्ता की ओर से देरी किसी विलंब की रणनीति, सद्भावना की कमी, जानबूझकर निष्क्रियता या लापरवाही के कारण न हो।

(ii) देरी को माफ करने के कारणों पर विचार करते हुए, अदालतें अन्य मामलों की तुलना में, उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदनों के संदर्भ में अधिक उदार हैं। जबकि अदालत को यह ध्यान में रखना होगा

कि अपील के उपशमन होने पर मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त होता है, यह अपीलकर्ता के गैर इरादतन चूक के कारण अपील को बंद कर उसे दंडित नहीं करेगी। अदालतें उपशमन के आधार पर अपील खारिज करने की बजाय उपशमन को रद्द कर मामले को गुण-दोष के आधार पर तय करती हैं।

(iii) विलंब क्षमा करने में निर्णायक कारक देरी की अवधि नहीं, बल्कि संतोषजनक स्पष्टीकरण की पर्याप्तता है।

(iv) न्यायालय द्वारा दिखाई जाने वाली उदारता की सीमा या डिग्री, आवेदन की प्रकृति और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, अदालतें लंबित अपील में आवेदन करने में होने वाली देरी को अपील दायर करने में होने वाली देरी की तुलना में अधिक उदारतापूर्वक देखती हैं। अदालतें वकील की चूक से संबंधित आवेदनों को वादकारियों की चूक से संबंधित आवेदनों की तुलना में अधिक उदारता से देखती हैं। इसका उत्कृष्ट उदाहरण अपील दायर करने में देरी की माफी के लिए आवेदनों और कमियों के सुधार के बाद अपील फिर से दाखिल करने में देरी की माफी के लिए आवेदनों के प्रति अदालतों के दृष्टिकोण में अंतर है।

(v) किसी अपीलकर्ता को 'परिश्रम' या 'निष्क्रियता की कमी के लिए तभी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, जब उसके द्वारा जो कुछ करने की आवश्यकता होती है, वह नहीं किया जाता है। जब कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं होती है, तो अदालतें अपीलकर्ता से मेहनती होने की उम्मीद नहीं करती हैं। जहां किसी अपील को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है और कुछ वर्षों तक अंतिम सुनवाई के लिए सूचीबद्ध होने की उम्मीद नहीं होती है, तो अपीलकर्ता से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह स्थिति का पता लगाने के लिए हर कुछ हफ्तों में अदालत या अपने वकील के पास जाए और न ही जांच करता रहे कि क्या प्रतिवादी जीवित है। वह केवल अपील की लिस्टिंग के बारे में अपने वकील के कॉल या सूचना का इंतजार करता है। (पैरा 8) [12-एफ,जी,एच, 13-ए,बी,सी,डी,ई,एफ,जी,एच 14-ए]

शकुंतला देवी जैन बनाम कुंतल कुमारी एआईआर 1969 एससी 575; एन.बालाकृष्णन बनाम एम.कृष्णमूर्ति 1998 (7) एससीसी 123; भारत संघ बनाम राम चरण (मृत) जरिये विधिक प्रतिनिधी एआईआर 1964 एससी 215; राम नाथ साव बनाम गोबरधन साव 2002 (3) एससीसी 195; सीतल प्रसाद सक्सेना (मृत) एलआर द्वारा बनाम भारत संघ एवं अन्य। 1985 (1) एससीसी 163; और मध्य प्रदेश राज्य बनाम एसएस अकोलकर -1996 (2) एससीसी 568 - पर भरोसा किया गया।

कृष्णा बनाम चथप्पन 1890 आईएलआर 13 मद 269- का उल्लेख है।

यदि निम्नलिखित तीन स्थितियाँ मौजूद हैं, तो अदालतें आमतौर पर देरी को माफ कर देंगी और उपशमन को रद्द कर देंगी (यहां तक कि देरी की अवधि काफी है और उपशमन के कारण एक मूल्यवान अधिकार विपरीत पक्ष-मृतक के विधिक प्रतिनिधि को अर्जित हो सकता हैः

(i) प्रतिवादी की उस अवधि के दौरान मृत्यु हो गई जब अपील बिना किसी सुनवाई की तारीख तय किए लंबित थी;

(ii) न तो मृत प्रतिवादी के वकील और न ही मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों ने अदालत को प्रतिवादी की मृत्यु की सूचना दी और अदालत ने अपीलकर्ता को ऐसी मृत्यु की सूचना नहीं दी है।

(iii) अपीलकर्ता का कहना है कि वह प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था और उसके दावे पर संदेह या खंडन करने के लिए कोई सामग्री नहीं है। (पैरा 13) [16-ए,बी,सी,डी]

परिसीमा अधिनियम, 1963:

एस. 5 और अनुसूची, अनुच्छेद 120 और 121 - उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदन दाखिल करने में देरी की माफी - विचार किए जाने वाले कारक - स्पष्ट किया गया- सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश

22, नियम 4, 10ए और 11।

शब्दों और वाक्यांशोंः

'पर्याप्त कारण' - परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के संदर्भ में अर्थ

केस कानून संदर्भ

शकुंतला देवी जैन बनाम कुंतल कुमारीक एआईआर 1969 एससी 575- पर निर्भर (पैरा 6)

कृष्णा बनाम छठप्पन 1890 आईएलआर 13 मैड 269 - संदर्भित (पैरा 6)

एन.बालकृष्णन बनाम एम.कृष्णमूर्ति 1998 (7) एससीसी 123- पर निर्भर (पैरा 6)

यूनियन ऑफ इंडिया बनाम राम चरण (मृतक) के विधिक प्रतिनिधि। एआईआर 1964 एससी 215 - पर निर्भर (पैरा 7)

राम नाथ साव बनाम गोबरधन साव 2002 (3) एससीसी 195--पर भरोसा (पैरा 6)

सीतल प्रसाद सक्सेना (मृत) एलआर द्वारा। बनाम भारत संघ एवं अन्य। 1985 (1) एससीसी 163- पर निर्भर (पैरा 6)

मध्य प्रदेश राज्य बनाम एसएस अकोलकर 1996 (2) एससीसी 568 - पर निर्भर (पैरा 6)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2008 की सिविल अपील संख्या 4440

द्वितीय अपील संख्या 147/1993-ए और आईए संख्या 1011/03 में एसए संख्या 147/1993-ए और 1013/03 में एसए संख्या में एर्नाकुलम में केरल उच्च न्यायालय के अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 5.10.2005 से। 147/1993-ए एवं सीएम परिशिष्ट। 332/03 द्वितीय अपील क्रमांक 147/1993-ए

अपीलकर्ता की ओर से केवी विश्वनाथन, अनिल कौशिक, गोपाल सिंह और टी. राजा।

उत्तरदाताओं के लिए पी. कृष्णमूर्ति, मालिनी पोडुवल।

न्यायालय का आदेश दिया गया-

आर. वी. रविन्द्रन जे. 1. छूट दी गयी

2. यह अपील अपीलकर्ता द्वारा केरल उच्च न्यायालय की फाइल पर 1993 की दूसरी अपील संख्या 147 में है। उक्त अपील के लंबित रहने के दौरान, उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरे प्रतिवादी की 17.4.2002 को मृत्यु हो गई। इस संबंध में, अपीलकर्ता ने 9.10.2003 को निम्नलिखित तीन

आवेदन दायर किएः (i) दूसरी अपील में दूसरे प्रतिवादी के खिलाफ अपील के उपशमन को रद्द करने के लिए एक आवेदन (ii) उपशमन को रद्द करने के लिए उक्त आवेदन दाखिल करने में हुई देरी को माफ करने के लिए एक आवेदन और (iii) दूसरी अपील में मृत दूसरे प्रतिवादी के एलआर को रिकॉर्ड पर लाने के लिए एक आवेदन। उच्च न्यायालय ने, यह मानते हुए कि 394 दिनों की देरी को संतोषजनक ढंग से समझाया नहीं गया था, देरी की माफी के लिए आवेदन को खारिज कर दिया और साथ ही उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदन को खारिज कर दिया और परिणामस्वरूप, एलआर को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदन को दिनांक 05.10.2005 को अलग अलग आदेश द्वारा खारिज कर दिया। चूंकि दूसरी अपील में मृत दूसरा प्रतिवादी मूल मुकदमे में एकमात्र वादी था, जिससे दूसरी अपील उत्पन्न हुई थी, दूसरी अपील का उपशमन होने से 5.10.2005 को समाप्त की गई थी। उक्त चार आदेशों को इस अपील में विशेष अनुमति द्वारा चुनौती दी गयी है।

3. अपीलकर्ता का तर्क है कि उसकी ओर से कोई लापरवाही या चूक नहीं हुई थी और उसने देरी के कारणों को संतोषजनक ढंग से समझाया था जो उसके नियंत्रण से परे परिस्थितियों के कारण थे। अपीलकर्ता, एक देवोस्वोम, जिसका प्रबंधन एक समिति द्वारा किया जाता था, ने देरी के लिए निम्नलिखित स्पष्टीकरण दियारू जब 1993 में दूसरी अपील दायर की

गई थी, तो इसे पहले की प्रबंध समिति द्वारा प्रबंधित किया गया था। बाद में देवोस्वोम के प्रबंधन से संबंधित एक मुकदमे में, उप-न्यायालय, कोल्लम ने देवोस्वोम के प्रबंधन के लिए एक रिसीवर नियुक्त किया। इसके बाद 25.5.2003 को चुनाव हुए और नवनिर्वाचित प्रबंधन समिति ने 8.6.2003 को पदभार ग्रहण किया। नई प्रबंधन समिति दूसरी अपील के लंबित होने से अनभिज्ञ थी और इसलिए, समय पर आवश्यक आवेदन दायर करने की स्थिति में नहीं थी। समिति को अपील के बारे में तभी पता चला जब उसे मामले के बारे में वकील से दिनांक 7.9.2003 को एक पत्र प्राप्त हुआ। इसके बाद मृतक के विधिक प्रतिनिधियों के विवरण का पता लगाया गया और 9.10.2003 को आवेदन दायर किया।

4. इसलिए हमारे विचार के लिए यह प्रश्न उठता है कि क्या उच्च न्यायालय को देरी को माफ कर देना चाहिए था और उपशमन को रद्द कर देना चाहिए था। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए आदेश 22 सीपीसी के प्रासंगिक प्रावधानों और उनके दायरे का उल्लेख करना आवश्यक है।

4.1) आदेश 22 नियम 11 सीपीसी में प्रावधान है कि अपील पर आदेश 22 के आवेदन में, जहां तक संभव हो 'वादी, 'प्रतिवादी और 'मुकदमा' शब्दों में क्रमशः एक अपीलकर्ता, एक प्रतिवादी और एक अपील शामिल होगी। आदेश 22 के नियम 1 में प्रावधान है कि यदि मुकदमा करने का अधिकार जीवित रहता है तो प्रतिवादी की मृत्यु के कारण अपील

समाप्त नहीं होगी।

4.2) आदेश 22 का नियम 4 प्रतिवादी की मृत्यु के मामले में प्रक्रिया निर्धारित करता है। नियम 4 के उप- नियम (1) में प्रावधान है कि जहां एक प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है और मुकदमा करने का अधिकार अकेले जीवित उत्तरदाताओं के खिलाफ जीवित नहीं रहता है या जहां एकमात्र प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है और मुकदमा करने का अधिकार जीवित रहता है, तो अदालत उस संबंध में किए गए एक आवेदन पर, मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधि को अपील में एक पक्षकार बनाएगा और अपील में आगे बढ़ेगा। उप-नियम (3) में प्रावधान है कि जहां मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधि को पक्षकार बनाने के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया है, वहां मृत प्रतिवादी के खिलाफ अपील समाप्त हो जाएगी। (आदेश 22 सीपीसी के संदर्भ में 'एबेट' शब्द का अर्थ है वास्तविक रूप से रुचि रखने वाले पक्ष की मृत्यु के कारण मुकदमा या अपील की समाप्ति)।

4.3) परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 120 के तहत, मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि को सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत अपील में पक्षकार बनाने की सीमा अवधि, प्रतिवादी की मृत्यु की तारीख से 90 दिन है। अनुच्छेद 121 में प्रावधान है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उपशमन को रद्द करने के आदेश के लिए आवेदन की सीमा अवधि से 60 दिन की है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 में प्रावधान है कि किसी भी

आवेदन को निर्धारित अवधि के बाद स्वीकार किया जा सकता है यदि आवेदक अदालत को संतुष्ट करता है कि उसके पास ऐसी अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण है।

4.4) आदेश 22 के नियम 4 का उप-नियम (5) अब स्पष्ट संकेत देता है कि पर्याप्त कारण क्या होगा। यह प्रदान करता है कि जहां अपीलकर्ता एक प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था, और इस कारण से परिसीमा अधिनियम, 1963 में निर्दिष्ट समय के भीतर नियम 4 के तहत मृत प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि के प्रतिस्थापन के लिए आवेदन नहीं कर सका, और परिणामस्वरूप, अपील समाप्त हो गई है, और अपीलकर्ता परिसीमा अधिनियम में निर्दिष्ट अवधि की समाप्ति के बाद परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत आवेदन को स्वीकार करने के लिए आवेदन करता है, इस आधार पर कि वह ऐसी अज्ञानता के संतोषप्रद कारण, परिसीमा अधिनियम में निर्दिष्ट अवधि के भीतर आवेदन न कर सका, अदालत, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत आवेदन पर विचार करते समय, ऐसी अज्ञानता के तथ्य पर उचित ध्यान देगी, यदि साबित हो जाए।

4.5) आदेश 22 के नियम 10ए में प्रावधान है कि जब भी मुकदमे में किसी पक्ष की ओर से पेश होने वाले वकील को उस पक्ष की मृत्यु के बारे में पता चलता है, तो वह अदालत को इसके बारे में सूचित करेगा,

और अदालत दूसरे पक्ष को ऐसी मृत्यु की सूचना देगी।

5. नियम 4 के शब्दों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि जब एक प्रतिवादी की मृत्यु हो जाती है और उसके विधिक प्रतिनिधि को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदन नहीं किया जाता है, तो 90 दिनों की निर्धारित अवधि की समाप्ति पर, कानूनी प्रवर्तन द्वारा छूट दी जाती है। उपशमन किसी न्यायिक निर्णय या न्यायिक आदेश द्वारा उपशमन की घोषणा पर निर्भर नहीं है। यह कानून के संचालन से होता है. लेकिन फिर भी' '
के लिए किसी मामले को समाप्त करने के लिए न्यायिक संज्ञान की आवश्यकता होती है। प्रशासनिक कानून से उधार लिया वाक्यांश (शून्य आदेशों के संदर्भ में प्रयुक्त), एक अपील के माथे पर कोई ब्रांड नहीं होता है कि वह 'उपशमित' हो गया है, और न ही यह उपशमित होने पर स्वचालित रूप से बंद हो जाता है। कुछ स्तर पर, अदालत को उपशमन पर ध्यान देना होगा और मामले को उपशमित होने से समाप्त होने के रूप में दर्ज करना होगा (जहां मृतक एकमात्र प्रतिवादी था) या रिकॉर्ड करना होगा कि किसी विशेष प्रतिवादी के खिलाफ अपील समाप्त हो गई थी (यदि एक से अधिक हैं और वाद कारण अन्य के विरुद्ध जीवित रहता है।)

6. धारा 5 के तहत आवेदनों पर विचार करते समय अदालतों का दृष्टिकोण क्या होना चाहिए, इसे कई फैसलों में प्रकट किया गया है। उनमें से दो का उल्लेख करना पर्याप्त हो सकता है। शकुंतला देवी जैन बनाम

कुंतल कुमारी (एआईआर 1969 एससी 575 में, इस न्यायालय ने कृष्णा बनाम छठप्पन (1890 आईएलआर 13 मद 269) के निम्नलिखित उत्कृष्ट कथन को दोहरायाः

> ''... धारा 5 अदालतों को विवेकाधिकार देती है क्षेत्राधिकार के संबंध में इसका प्रयोग इस तरीके से किया जावे, जिसमें न्यायिक शक्ति और विवेक का प्रयोग भलीभांति स्थापित सिद्धांतों के अनुसार किया गया हो। शब्द 'पर्याप्त कारण' तात्विक न्याय की प्राप्ति में उदार रूख का निर्माण करते हैं, जहां कि अपीलकर्ता की कोई लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भावना की कमी न हो।''

एन. बालकृष्णन बनाम एम.कृष्णमूर्ति (1998 (7) एससीसी 123, में) इस न्यायालय ने कहाः

> ''यह स्वयंसिद्ध है कि देरी की माफी अदालत के विवेक का मामला है। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 यह नहीं कहती है कि इस तरह के विवेक का प्रयोग केवल तभी किया जा सकता है जब देरी एक निश्चित सीमा के भीतर हो। देरी की लंबाई कोई मायने नहीं रखती, स्पष्टीकरणकि स्वीकार्यता ही एकमात्र मापदंड है। कभी-कभी सबसे छोटी सीमा की देरी भी स्पष्टीकरण की अस्वीकार्यता के कारण अक्षम्य हो सकती

है, जबकि कुछ अन्य मामलों में, बहुत लंबी सीमा की देरी को माफ किया जा सकता है क्योंकि स्पष्टीकरण संतोषजनक है। एक बार अदालत स्पष्टीकरण को पर्याप्त समझकर स्वीकार करती है। यह विवेक के सकारात्मक प्रयोग का परिणाम है और आम तौर पर वरिष्ठ न्यायालय को इस तरह के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में तो बिल्कुल भी नहीं, जब तक कि विवेक का प्रयोग पूरी तरह से अस्थिर आधार पर या मनमाना या विकृत न हो। लेकिन यह एक अलग मामला है जब पहली अदालत देरी को माफ करने से इनकार कर देती है। ऐसे मामलों में, वरिष्ठ अदालत देरी के लिए दिखाए गए कारण पर नए सिरे से विचार करने के लिए स्वतंत्र होगी और ऐसा वरिष्ठ न्यायालय निचली अदालत के निष्कर्ष से प्रभावित हुए बिना अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आने के लिए खुला रहेगा।

अदालत का प्राथमिक कार्य पक्षकारों के बीच विवाद का निपटारा करना और सारभूत न्याय को आगे बढ़ाना है..... परिसीमा के नियम पक्षकारों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए नहीं हैं। उनका उद्देश्य यह देखना है कि पक्षकारान्

टाल-मटोल की रणनीति का सहारा न लें, बल्कि तुरंत उनके समाधान खोजें।

एक अदालत जानती है कि देरी को माफ करने से इनकार करने पर मुकदमा दायर करने वाले को अपना पक्ष रखने से रोका जा सकता है। ऐसा कोई पूर्वानुमान नहीं है कि अदालत का दरवाजा खटखटाने में देरी हमेशा जानबूझकर की जाती है। इस न्यायालय ने माना है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत ''पर्याप्त कारण'' शब्द को एक उदार संरचना प्राप्त होनी चाहिए ताकि सारवान् न्याय को आगे बढ़ाया जा सके।

यह याद रखना चाहिए कि देरी के हर मामले में, संबंधित पक्षकार की ओर से कुछ चूक हो सकती है। केवल इतना ही उसकी याचिका को ठुकराने और उसके खिलाफ दरवाजा बंद करने के लिए पर्याप्त नहीं है। यदि स्पष्टीकरण में दुर्भावना की बू नहीं आती है या इसे टालने की रणनीति के हिस्से के रूप में सामने नहीं रखा गया है, तो अदालत को वादी के प्रति अत्यधिक ध्यान देना चाहिए। लेकिन जब यह सोचने का उचित आधार हो कि पक्षकार द्वारा जानबूझकर समय प्राप्ति के लिए देरी की गई, तो अदालत को स्पष्टीकरण

स्वीकार करने विरुद्ध होना चाहिए।''

[बल दिया गया]

7. इस न्यायालय ने कई निर्णयों में आदेश 22 के नियम 4 और 9 के दायरे पर भी विचार किया है। हम उनका उल्लेख करेंगे. यूनियन ऑफ इंडिया बनाम राम चरण (मृतक) में एलआर द्वारा। (एआईआर 1964 एससी 215,) इस न्यायालय ने इस प्रकार कहाः

> ''संहिता के प्रावधान न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने की दृष्टि से हैं। बेशक, न्यायालय इस बात पर विचार करेगा कि क्या अपीलकर्ता ने समय पर मुकदमा जारी नहीं रखने या उपशमन रद्द करने के लिए आवेदन नहीं करने के लिए पर्याप्त कारण स्थापित किया है, जिसे सुझाए गए कारण के ऐसे सबूत की अपेक्षा करने में अति-सख्त होने की आवश्यकता नहीं है, यह दोनों के स्थापित तथ्यों को स्वीकार करेगा, क्योंकि प्रश्न, पक्षकारों के बीच विवाद के गुणावगुण से संबंधित नहीं है और क्योंकि यदि उपशमन को अपास्त किया जाता है तो, विवाद के गुणावगुण निर्धारित किए जा सकते हैं, जबकि, यदि उपशमन रद्द नहीं किया जाता है, तो अपीलकर्ता अपनी दोषी, लापरवाही या सतर्कता की कमी के कारण अपनेदावे को साबित करने से वंचित हो

जाता है।

यह सच है कि प्रतिवादी के स्वास्थ्य या मौजूदा स्थिति के बारे में समय-समय पर नियमित पूछताछ करना अपीलकर्ता का कोई कर्तव्य नहीं है।"

(बल दिया गया)

न्यायालय ने राम चरण (सुप्रा) में यह आरोप लगाने के अलावा कि वादी/अपीलकर्ता को मृत्यु के बारे में पता नहीं था, उचित समय के भीतर मृत्यु के बारे में न जानने के कारणों को स्पष्ट करने की आवश्यकता के बारे में कुछ टिप्पणियाँ भी कीं। 1976 के संशोधन अधिनियम 104 द्वारा नियम 4 में उप-नियम (5) के बाद के सम्मिलन और आदेश 22 सीपीसी में नियम 10ए को जोड़ने के मद्देनजर उन टिप्पणियों को कमजोर कर दिया गया है, जिसके लिए (i) अदालत को मृत्यु की अज्ञानता पर ध्यान देने की आवश्यकता है। देरी को माफ करने के लिए पर्याप्त कारण के रूप में, (ii) मृत पक्ष के वकील को अपने मुवक्किल की मृत्यु के बारे में अदालत को सूचित करना होगा।

रामनाथ सावो बनाम गोवर्धन सावो (2002 (3) एससीसी 195) में इस न्यायालय ने इस प्रकार कहाः

"12. धारा 5 या संहिता के आदेश 22 नियम 9 या किसी

अन्य समान प्रावधान के अर्थ में ''पर्याप्त कारण'' अभिव्यक्ति को एक उदार निर्माण प्राप्त होना चाहिए ताकि सारभूत न्याय मिल सके। जहां लापरवाही निष्क्रियता या सद्भाविकता की कमी किसी पक्षकार के द्वारा नहीं की गयी है। किसी विशिष्ट मामले में प्रस्तुत स्पष्टीकरण ''पर्याप्त कारण'' होगा या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। कदम उठाने में हुई देरी के प्रस्तुत स्पष्टीकरण को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के लिए कोई स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला नहीं हो सकता है। लेकिन एक बात स्पष्ट है कि अदालतों को दिखाए गए कारण में गलती खोजने की प्रवृत्ति के साथ आगे नहीं बढ़ना चाहिए और निपटान अभियान के अति-उत्साह में एक लापरवाहीपूर्ण आदेश द्वारा याचिका को खारिज नहीं करना चाहिए। प्रस्तुत स्पष्टीकरण की स्वीकृति एक नियम होनी चाहिए और इनकार, एक अपवाद, की जब कोई लापरवाही या निष्क्रियता या सद्भावना की कमी का आरोप चूककर्ता पक्ष पर नहीं लगाया जा सकता है। दूसरी ओर, मामले पर विचार करते समय अदालतों को इस तथ्य पर ध्यान देना चाहिए कि निर्धारित समय के भीतर कदम नहीं उठाने से दूसरे पक्ष को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त हुआ है, जिसे सामान्य तरीके से देरी को माफ करके

हल्के में पराजित नहीं लिया जाना चाहिए। हालाँकि, मामले पर पांडित्यपूर्ण और अति-तकनीकी दृष्टिकोण अपनाते हुए दिए गए स्पष्टीकरण को तब खारिज नहीं किया जाना चाहिए जब दांवे ऊंचे हों और/या मामले में तथ्यों और कानून के तर्कपूर्ण बिंदु शामिल हों, जिससे उस पक्ष को भारी नुकसान और अपूरणीय क्षति हो, जिसके खिलाफ मामला दर्ज किया गया हो। दावा या तो डिफॉल्ट रूप से या निष्क्रियता से समाप्त हो जाता है और ऐसे पक्षकार के मामले के गुणावगुण पर निर्णय होने के मूल्यवान अधिकार को नष्ट कर देता है। मामले पर विचार करते समय, अदालतों को दोनों तरीके से पारित आदेश के परिणामी प्रभाव के बीच संतुलन बनाना होगा।''

(बल दिया गया)

सीतल प्रसाद सक्सेना (मृतक) के विधिक वारिसान में एलआर द्वारा। बनाम भारत संघ एवं अन्य। (1985 (1) एससीसी 163,) में इस न्यायालय ने कहाः

''..एक बार जब कोई अपील उच्च न्यायालय में लंबित हो

जाती है, तो उत्तराधिकारियों से उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के पक्षकारों के निरंतर अस्तित्व पर निरंतर नजर रखने की उम्मीद नहीं की जाती है, जिसकी सीट उस स्थान से बहुत दूर है जहां ग्रामीण क्षेत्रों में पक्षकार निवास कर रहे होते हैं और एक पारंपरिक ग्रामीण परिवार में पिता ने अपने बेटे को उस मुकदमे के बारे में सूचित नहीं किया गया होता है, जिसमें वह शामिल था और पक्षकार था। यह याद रखें कि कई बार कहा गया है कि प्रक्रिया के नियम न्याय को आगे बढ़ाने के लिए बनाए गए हैं और उनकी व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि गलती करने वालेपक्षों को दंडित करने के लिए उन्हें दंडात्मक कानून न बनाया जाए।''

मध्य प्रदेश राज्य बनाम एसएस अकोलकर - 1996 (2) एससीसी 568 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः

''आदेश 22 नियम 10ए के तहत, किसी पक्ष की मृत्यु के बारे में पता चलने पर, वकील का यह कर्तव्य है कि वह अदालत को इसकी सूचना दे और अदालत दूसरे पक्ष को मौत की सूचना देगी। आवश्यक अभाव के लिए विधिक प्रतिनिधि के प्रतिस्थापन के लिए विलंब उसकी मृत्यु की

तिथि के ज्ञात होने की तिथि से ही प्रारम्भ हो जाता है।

परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत देरी को माफ करने और आदेश 22 के तहत उपशमन को रद्द करने पर विचार पूरी तरह से विशिष्ट और अलग है। न्यायालय हमेशा उत्तरार्द्ध पर उदारतापूर्वक विचार करता है, हालांकि कुछ मामलों में, न्यायालय अपील दायर करने में धारा 5 के तहत देरी को माफ करने से इनकार कर सकता है। अपील दायर होने और लंबित होने के बाद, सरकार से यह उम्मीद नहीं की जाती है कि वह इस पर नजर रखे कि प्रतिवादी जीवित है या उसकी मृत्यु हो गई है। मामले को राज्य के वकील के संज्ञान में लाए जाने के बाद, उचित सत्यापन के बाद देर से आवेदन दायर किये गए। यह सच है किलिमिटेशन एक्ट की धारा 5 लागू होगी और देरी की व्याख्या करना आवश्यक है। आधिकारिक कामकाज में देरी के लिए सार्वजनिक न्याय के नजरिए से इसकी व्याख्या और दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है।"

8. उपशमन को रद्द करने के लिए आवेदनों पर विचार करने में लागू सिद्धांतों को इस प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता हैः

(i) शब्द "सीमा अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण" को

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और मामले के प्रकार के आधार पर उचित, व्यावहारिक और उदार तरीके से समझा और लागू किया जाना चाहिए। लिमिटेशन एक्ट की धारा 5 में 'पर्याप्त कारण' शब्द को एक उदार निर्माण प्राप्त होना चाहिए ताकि सारभूत न्याय को आगे बढ़ाया जा सके, जबकि देरी अपीलकर्ता की ओर से किसी विलंब रणनीति, सद्भावना की कमी,जानबूझकर निष्क्रियता या लापरवाही के कारण न हो।

(ii) देरी को माफ करने के कारणों पर विचार करते समय, अदालतें अन्य मामलों की तुलना में उपशमन को रद्द करने के आवेदनों के संदर्भ में अधिक उदार हैं। अदालत को यह ध्यान में रखना होगा कि अपील समाप्त होने पर मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त होता है, लेकिन यह किसी अपीलकर्ता को अनपेक्षित चूक के लिए अपील को बंद कर दंडित नहीं करेगा। अदालतें उपशमन के आधार पर अपील को समाप्त करने के बजाय, उपशमन को रद्द कर देती हैं और मामले को गुण-दोष के आधार पर तय करती हैं।

(iii) देरी को माफ करने में निर्णायक कारक देरी की लंबाई नहीं, बल्कि संतोषजनक स्पष्टीकरण की पर्याप्तता है।

(iv) न्यायालय द्वारा दिखाई जाने वाली उदारता की सीमा या डिग्री, आवेदन की प्रकृति और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, अदालतें लंबित अपील में आवेदन करने में होने वाली

देरी को अपील दायर करने में होने वाली देरी की तुलना में अधिक उदारतापूर्वक देखती हैं। अदालतें वकील की चूक से संबंधित आवेदनों को वादकारियों की चूक से संबंधित आवेदनों की तुलना में अधिक उदारता से देखती हैं। इसका उत्कृष्ट उदाहरण अपील दायर करने में देरी की माफी के लिए आवेदनों और कमियों के सुधार के बाद अपील फिर से दाखिल करने में देरी की माफी के लिए आवेदनों के प्रति अदालतों के दृष्टिकोण में अंतर है।

(v) किसी अपीलकर्ता को 'परिश्रम' या 'निष्क्रियता की कमी के लिए तभी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, जब उसके द्वारा जो कुछ करने की आवश्यकता होती है, वह नहीं किया जाता है। जब कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं होती है, तो अदालतें अपीलकर्ता से मेहनती होने की उम्मीद नहीं करती हैं। जहां किसी अपील को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है और कुछ वर्षों तक अंतिम सुनवाई के लिए सूचीबद्ध होने की उम्मीद नहीं होती है, तो अपीलकर्ता से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह स्थिति का पता लगाने के लिए हर कुछ हफ्तों में अदालत या अपने वकील के पास जाए और न ही जांच करता रहे कि क्या प्रतिवादी जीवित है। वह केवल अपील की लिस्टिंग के बारे में अपने वकील के कॉल या सूचना का इंतजार करता है।

9. आगे कुछ विशेष कारकों का भी उल्लेख करते है, जो कि

उपशमन को रद्द करने और विधिक प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए आवेदनों में देरी के संदर्भ में पर्याप्त कारण को बताते हैं।

10. पहला यह कि क्या अपील ऐसी अदालत में लंबित है जहां सुनवाई की नियमित और आवधिक तारीखें तय हैं। अधीनस्थ न्यायालय में लंबित अपील और उच्च न्यायालय में लंबित अपील के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है। निचली अदालतों में, सुनवाई की तारीखें समय-समय पर तय की जाती हैं और एक पक्ष या उसके वकील से उन तारीखों पर उपस्थित होने और मामले पर नजर रखने की उम्मीद की जाती है। इस प्रक्रिया को 'सुनवाई स्थगन' के रूप में जाना जाता है। वास्तव में, राम चरण (सुप्रा) मामले में इस न्यायालय ने अनुमान लगाया कि स्थगन प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए कानूनी प्रतिनिधि लाने की सीमा अवधि 90 दिन तय की गई होगीः

> "विधायिका ने ऐसी अपेक्षा की होगी कि साधारणतया किसी मुकदमें की तीन माह के भीतर दो क्रमिक सुनवाई का अंतराल काफी होगा और उस निश्चित अवधि में तय सुनवाई के दिन किसी भी प्रतिवादी की उपस्थिति का कारण उसके अधिवक्ता द्वारा बताया जा सकता है अथवा कोई अन्य कारण जैसे कि उसकी मृत्यु हो जाना वादी दूसरे पक्ष की अनुपस्थिति के कारण के बारे में पूछताछ कर

सकता है।''

इसके विपरीत, जब कोई अपील उच्च न्यायालय में लंबित होती है, तो सुनवाई की तारीखें समय-समय पर तय नहीं की जाती हैं। एक बार अपील स्वीकार हो जाने के बाद, यह वस्तुतः भंडारण में चली जाती है और अदालत के समक्ष तभी सूचीबद्ध होती है जब यह सुनवाई के लिए तैयार होती है या जब अंतरिम निर्देश की मांग करने वाला कोई आवेदन दायर किया जाता है। उच्च न्यायालयों में लंबित अपीलों का कई वर्षों तक सूचीबद्ध न होना आम बात है। (कुछ अदालतों में जहां बड़ी संख्या में लंबित मामले हैं, सुनवाई न होने की अवधि 10 साल या उससे भी अधिक हो सकती है।) जब उच्च न्यायालय द्वारा अपील स्वीकार कर ली जाती है, तो वकील पक्षकारों को सूचित करता है कि जब भी मामला सुनवाई के लिए सूचीबद्ध होगा, वे संपर्क करेंगे। अपील स्वीकार करने और दलीलों के लिए अपील को सूचीबद्ध करने के बीच की अवधि के दौरान अपीलकर्ता को कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है (पेपर बुक दाखिल करने या जहां भी आवश्यक हो, पेपर बुक तैयार करने के लिए शुल्क जमा करने के अलावा)। उच्च न्यायालय अपीलों से भरे हुए हैं और कई वर्षों तक सूचीबद्ध न होने के लिए वादी किसी भी तरह से जिम्मेदार नहीं है। अपीलकर्ता को प्रवेश और सुनवाई के लिए सूचीबद्ध होने के बीच की लंबी अवधि के दौरान आवधिक पूछताछ द्वारा यह ट्रैक करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि

प्रतिवादी मृत है या जीवित है। जब किसी अपील को सुनवाई के लिए कोई तारीख तय किए बिना उच्च न्यायालय में बड़ी संख्या में वर्षों तक निलंबित एनीमेशन में लंबित रखा जाता है, तो अपीलकर्ता को प्रतिवादी की मृत्यु के बारे में पता होने की कोई संभावना नहीं है, जब तक कि दोनों आस-पास में नहीं रहते या संबंधित थे या अदालत प्रतिवादी की मृत्यु की सूचना देते हुए उसे नोटिस जारी करती है।

11. दूसरी परिस्थिति यह है कि क्या मृत प्रतिवादी के वकील या मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधि ने अदालत को प्रतिवादी की मृत्यु के बारे में सूचित किया था और क्या अदालत ने अपीलकर्ता को ऐसी मौत की सूचना दी थी। आदेश 22 का नियम 10ए प्रतिवादी के वकील पर यह कर्तव्य डालता है कि जब भी उसे ऐसे प्रतिवादी की मृत्यु के बारे में पता चले तो वह अदालत को सूचित करे। जब मृत्यु की सूचना दी जाती है और ऑर्डरशीट/कार्यवाही में दर्ज की जाती है और अपीलकर्ता को सूचित किया जाता है, तो अपीलकर्ता को मृत्यु का ज्ञान होता है और अपीलकर्ता का कर्तव्य होता है कि वह मृतक के कानूनी प्रतिनिधि को रिकॉर्ड पर लाने के लिए कदम उठाए। परिश्रम का प्रारम्भ ऐसे ज्ञान की तिथि से शुरू होता है। यदि अदालत द्वारा प्रतिवादी की मृत्यु के बारे में सूचित करने के बाद भी अपीलकर्ता अनभिज्ञता व्यक्त करता है तो यह लापरवाही या परिश्रम की कमी का संकेत हो सकता है।

12. तीसरी परिस्थिति यह है कि क्या अपीलकर्ता के दावे का खंडन करने के लिए कोई सामग्री है, यदि वह स्पष्ट रूप से कहता है कि वह प्रतिवादी की मृत्यु से अनजान था। किसी सामग्री के अभाव में अदालत उसके इस दावे को स्वीकार कर लेगी कि उसे मौत की जानकारी नहीं थी।

13. इस प्रकार यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यदि निम्नलिखित तीन स्थितियाँ मौजूद हैं, तो अदालतें आमतौर पर देरी को माफ कर देंगी, और उपशमन को रद्द कर देंगी (भले ही देरी की अवधि काफी हो और एक मूल्यवान अधिकार विपरीत पक्ष को प्राप्त हो सकता है - मृतक के विधिक प्रतिनिधि - उपशमन के कारण):

(i) प्रतिवादी की उस अवधि के दौरान मृत्यु हो गई थी जब अपील बिना किसी सुनवाई की तारीख तय किए लंबित थी;

(ii) न तो मृत प्रतिवादी के वकील और न ही मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों ने अदालत को प्रतिवादी की मृत्यु की सूचना दी थी और अदालत ने अपीलकर्ता को ऐसी मृत्यु की सूचना नहीं दी है।

(iii) अपीलकर्ता का कहना है कि वह प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ था और उसके दावे पर संदेह या खंडन करने के लिए कोई सामग्री नहीं है।

14. यदि, इस मामले की तरह, अपील 1993 में स्वीकार की गई थी और 2005 तक सुनवाई के लिए नहीं आई, और प्रतिवादी की बीच में ही

मृत्यु हो गई, तो अदालत को प्रतिवादी की मृत्यु के बारे में उसकी अज्ञानता के लिए अपीलकर्ता को उपशमन को रद्द करने से इंकार कर दण्डित नहीं करना चाहिए। परिश्रम की कमी या लापरवाही के लिए अपीलकर्ता को केवल तभी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जब वह मौत के बारे में जानता है और कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए कदम उठाने में विफल रहता है। जहां अपीलकर्ता प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ होने के कारण, कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने के लिए कदम नहीं उठाता है, वहां परिश्रम की कमी या लापरवाही का कोई सवाल ही नहीं हो सकता है।

15. इस मामले में, अपील को उच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर सूचीबद्ध नहीं किया जा रहा था। न तो उच्च न्यायालय में मृत दूसरे प्रतिवादी के वकील, न ही मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों ने उच्च न्यायालय को मृत्यु की सूचना दी। अपीलकर्ता को मृत्यु की कोई सूचना नहीं दी गई। अपीलकर्ता एक संस्था है जो अपनी प्रबंध समिति के माध्यम से कार्य करती है। प्रासंगिक अवधि के दौरान, प्रबंधन का एक कोर्ट रिसीवर से एक निर्वाचित प्रबंध समिति में परिवर्तन हुआ था। अपीलकर्ता की ओर से एक हलफनामा दायर किया गया था कि उसकी नई समिति अपील की लंबितता से अनजान थी। अपील की लंबितता से अनभिज्ञ होना प्रतिवादी की मृत्यु से अनभिज्ञ होने के समान है। ऐसा दो परिस्थितियों में हो

सकता है. पहला, जहां अपीलकर्ता स्वयं मर चुका है और उसके एलआर रिकॉर्ड पर नए आए हैं। दूसरा जहां अपीलकर्ता एक संस्था या कंपनी है और एक नई समिति या प्रबंधन बोर्ड उसका प्रबंधन संभालता है। ऐसी स्थिति में, भले ही वे किसी व्यक्ति की मृत्यु के बारे में जानते हों, लेकिन यदि उन्हें अपील के बारे में पता नहीं है, तो वे लंबित अपील के संदर्भ में ऐसे व्यक्ति की मृत्यु के महत्व या प्रासंगिकता को नहीं जान सकते हैं। चूंकि अपील 1993 में ही स्वीकार कर ली गई थी, और सुनवाई की तारीखें समय-समय पर तय नहीं की गई थीं, नई समिति के पास यह जानने का कोई तरीका नहीं था कि अपील लंबित थी, कि भार्गवी अम्मा अपील में एक पक्ष थीं और मृतक भार्गवी अम्मा के कानूनी प्रतिनिधि (उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी प्रतिवादी) को रिकॉर्ड पर नहीं लाया गया था। इन परिस्थितियों में, हमारा विचार है कि देरी को संतोषजनक ढंग से समझाया गया था। उच्च न्यायालय को देरी को माफ करना चाहिए था, उपशमन को रद्द करना चाहिए था और अपीलकर्ता को मृत प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने की अनुमति देनी चाहिए थी।

16. हम तदनुसार इस अपील को स्वीकार करते हैं और तीन आवेदनों को खारिज करने वाले उच्च न्यायालय के दिनांक 5.10.2005 के आदेश और दिनांक 5.10.2005 के परिणामी आदेश को निरस्त करते हुए अपील को समाप्त कर देते हैं। विलंब क्षमा किया जाता है। उपशमन को अपास्त

किया गया। दूसरी अपील में मृत दूसरे प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों को रिकॉर्ड पर लाने की अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील के ज्ञापन के कारण-शीर्षक में संशोधन किया जाएगा। उच्च न्यायालय अब कानून के अनुसार गुण-दोष के आधार पर अपील पर सुनवाई करेगा। पक्षकारान् अपना अपना खर्चा वहन करेंगा।

आर.पी.

अपील स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।